



सामाजिक समरसता के दो मार्ग: गांधी का हृदय-परिवर्तन मॉडल बनाम अम्बेडकर का सामाजिक न्याय मॉडल, एक समकालीन मूल्यांकन

डॉ. धीरेन्द्र कुमार सिंह

असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग पंडित जवाहर लाल नेहरू स्नाकोत्तर महाविद्यालय, बांदा

DOI : <https://doi.org/10.5281/zenodo.23772681>

ARTICLE DETAILS

Research Paper

Received: 27-08-2026

Accepted: 26-09-2026

Published: 20-10-2026

Keywords:

सामाजिक समरसता, गांधी, अम्बेडकर, अस्पृश्यता, हृदय-परिवर्तन, सामाजिक न्याय, कानून, पूना पैक्ट,

ABSTRACT

यह शोध पत्र भारतीय सामाजिक समरसता के दो सबसे प्रभावशाली मॉडलों का तुलनात्मक विश्लेषण करता है। महात्मा गांधी ने समरसता के लिए सवर्ण हिंदुओं के हृदय-परिवर्तन और नैतिक सुधार पर बल दिया, जबकि डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने इसे संरचनात्मक सुधार, संवैधानिक अधिकार, प्रतिनिधित्व और जाति-व्यवस्था के उन्मूलन के माध्यम से प्राप्त करने का आग्रह किया। इस शोध पत्र का उद्देश्य गांधी के हृदय-परिवर्तन मॉडल के दार्शनिक आधारों की व्याख्या करना एवं अम्बेडकर के सामाजिक न्याय मॉडल की संवैधानिक संरचना की व्याख्या करना है। इस शोध पत्र में गुणात्मक व विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है। यह पेपर प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों तथा दोनों विचारकों के मूल लेखन के गुणात्मक विश्लेषण पर आधारित है। जहां प्राथमिक स्रोतों के रूप में गांधी के Harijan, Young India और अम्बेडकर के Annihilation of Caste, Who Were the Shudras? और संविधान सभा की बहसों का उपयोग किया गया है वहीं द्वितीयक स्रोतों के रूप में अन्य किताबों व शोध पत्रों का उपयोग किया गया है। इस शोध के माध्यम से यह जानने की कोशिश की जाएगी कि क्या समकालीन भारत में समरसता के लिए दोनों मॉडलों में समन्वय होना चाहिए? क्योंकि जहां अम्बेडकर का मॉडल संरचनात्मक सुधार एवं कानूनी न्याय प्रदान करने की बात करता है, वहीं

Disclaimer: The opinions, interpretations, conclusions, recommendations, analyses, and statements expressed in this research article are solely those of the author(s) and do not reflect the views, policies, or positions of the Publisher, Chief Editor, Editors, Editorial Board, Reviewers, or their affiliated institutions. The author(s) are solely responsible for ensuring the originality, authenticity, and integrity of the manuscript and for ensuring that it is free from plagiarism, AI-generated content, copyright infringement, data falsification, and any other form of academic misconduct.

महात्मा गांधी का मॉडल नैतिकता, सामाजिक स्वीकृति, एवं अंतःकरण की शुद्धि के माध्यम से सामाजिक बुराइयों को दूर करने की बात करते हैं।

प्रस्तावना

भारतीय संविधान की प्रस्तावना में बंधुत्व को राष्ट्रीय एकता का आधार माना गया है। लेकिन बंधुत्व केवल संवैधानिक शब्द से नहीं बनता, यह सामाजिक व्यवहार से बनता है। भारतीय समाज में जाति एक ऐतिहासिक और संरचनात्मक सच्चाई है जिसने सामाजिक समरसता को हमेशा चुनौती दी है। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान इस चुनौती के दो प्रमुख उत्तर उभरे। पहला उत्तर महात्मा गांधी का था, जो नैतिकता और आत्म-शुद्धि पर आधारित था। दूसरा उत्तर डॉ. भीमराव अम्बेडकर का था, जो अधिकार, कानून और प्रतिनिधित्व पर आधारित था। दोनों का लक्ष्य एक ही था - अस्पृश्यता का अंत और समरस समाज का निर्माण, लेकिन दोनों के मार्ग पूरी तरह अलग थे अर्थात् एक ही साध्य को प्राप्त करने के लिए दो अलग अलग साधन। इन साधनों की भिन्नता के कारण कई बार महात्मा गांधी एवं डॉ भीम राव अम्बेडकर के बीच वैचारिक संघर्ष भी देखे गए। 1932 का पूना पैक्ट इस वैचारिक संघर्ष का सबसे बड़ा प्रतीक है। जहां गांधी ने आमरण अनशन करके पृथक निर्वाचक मंडल का विरोध किया, वहीं अम्बेडकर ने अछूत वर्ग के लिए राजनीतिक शक्ति सुरक्षित करने के लिए संघर्ष किया। आज 90 साल बाद भी यह सवाल जीवित है कि क्या समरसता दिल बदलने से आएगी या कानून बदलने से। वर्तमान समय में जब NCRB के आंकड़े बताते हैं कि अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के लोगों के साथ अत्याचार के मामले बढ़ रहे हैं, तब दूसरी तरफ सरकार के द्वारा इनको रोकने के लिए कानूनी प्रयास एवं सामाजिक समरसता बढ़ाने के लिए तरह तरह के प्रयास किए जा रहे हैं, जैसे समरसता भोज, समरसता यात्राएं। इन परिस्थितियों में भी ये समस्याएँ कम होने का नाम क्यों नहीं ले रही हैं? इनका हल खोजने के लिए महात्मा गांधी एवं डॉ भीम राव अम्बेडकर के मॉडलों का तुलनात्मक मूल्यांकन करते हुए दोनों मॉडलों में समन्वय करने की आवश्यकता जान पड़ती है। यह शोध पत्र इसी आवश्यकता को पूरा करने का प्रयास है।

इस विषय पर जहां अनेक प्रमुख विद्वानों ने महात्मा गांधी एवं डॉ भीम राव अम्बेडकर के विचारों को एक दूसरे का विरोधी बताया, जैसे V.R. Mehta ने अपनी पुस्तक Foundations of Indian Political Thought में गांधी को उदारवादी सुधारक और अम्बेडकर को रेडिकल मानवतावादी बताया। M.N. Srinivas ने अपनी संस्कृतीकरण की अवधारणा में बताया कि गांधी का मॉडल उच्च जातियों के संस्कार बदलने पर निर्भर था। Christophe Jaffrelot ने अपनी पुस्तक Dr Ambedkar and Untouchability में तर्क दिया कि अम्बेडकर का मॉडल इसलिए ज्यादा सफल रहा क्योंकि उसने पीड़ित वर्ग को कर्ता बनाया, न कि गांधी की तरह दया का पात्र। Eleanor Zelliot ने दिखाया कि महाराष्ट्र में अम्बेडकर के आंदोलन ने दलितों में आत्म-सम्मान पैदा किया जो गांधी के हरिजन शब्द से नहीं आ सका।

अभी तक की कमी यह रही है कि अधिकांश शोध इन दोनों को विरोधी के रूप में देखते रहे हैं। इस शोध पत्र में दोनों के विचारों में समन्वयवादी तथ्यों को खोजने का प्रयास किया गया है।

गांधी के लिए अस्पृश्यता धर्म का अंग नहीं, बल्कि उसमें आई विकृति थी। यह तो शैतान की एक चाल है। शैतान ने हमेशा शास्त्रों की दुहाई दी है। लेकिन शास्त्र सत्य और विवेक से बढ़कर नहीं हैं। शास्त्र तो विवेक को निर्मल बनाने और सत्य को उदभासित करने के लिए ही रचे गये हैं। गांधी जी को विश्वास था कि अस्पृश्यता हिन्दू धर्म का अंग नहीं है। यदि अस्पृश्यता हिन्दू धर्म का अंग है तो ऐसा हिन्दू धर्म मेरे काम का नहीं है। मैं इतना जरूर कहना चाहूंगा कि नैतिकता के विरुद्ध कोई भी आचरण, फिर चाहे वह धर्म के ग्रंथों में ही क्यों न लिखा गया हो उसको तत्काल त्याग देना चाहिए क्योंकि वह आधारभूत आचार शास्त्र के विपरीत है। धर्म के नाम पर हम हिंदुओं ने बाहरी बातों का खूब आडंबर रच रखा है और धर्म को केवल खान-पान का विषय बनाकर उसकी प्रतिष्ठा कम कर दी है। बाहरी आडंबर के स्थान पर हमें आंतरिक पवित्रता का अधिक विचार करना चाहिए, चूंकि हम अनेक आंतरिक प्रलोभनों से घिरे हुए हैं; घोर से घोर अस्पृश्य और पाप पूर्ण विचारों का प्रवाह हमें स्पर्श कर रहा है और हमें अपवित्र बना रहा है। ऐसी दशा में हमें अपनी बाह्य पवित्रता के घमंड में मस्त होकर अपने उन भाइयों के स्पर्श के प्रभाव को तिल का ताड़ नहीं बनाना चाहिए, चूंकि हम अज्ञानवश एवं उससे भी अधिक अपने बड़प्पन की ठसक में हरि के जनों को अपने से नीचे समझते हैं। उस सर्वशक्तिमान परमात्मा के दरबार में हमारी पहचान इस बात से नहीं होगी कि हमने क्या-क्या खाया पिया है और किस-किस का स्पर्श किया है, बल्कि इस बात से होगी कि हमने किस-किस की सेवा की है और किस-किस तरह से की है। यदि हमने किसी भी विपत्तिग्रस्त और दुखी मनुष्य की सेवा की होगी तो वह (ईश्वर रूपी शक्ति) अवश्य हम पर कृपा दृष्टि डालेगा। इसलिए हमें भोजन के रूप में अमुक वस्तुओं के त्याग का उपयोग अपने छल कपट, धूर्तता एवं पापाचरण को छुपाने के लिए नहीं करना चाहिए। गांधी जी का मानना था कि मैं वर्णाश्रम को विशुद्ध वैदिक रूप में स्वीकार करता हूं, न कि उसके आज कल के लोक प्रचलित और स्थूल रूप को जो कि दूषित है। गांधी जी कहते हैं कि मैं अस्पृश्यता को मानने के लिए अपने मन को कभी भी तैयार नहीं कर पाया हूं। मैं बराबर इसे हिंदू धर्म का एक भारी दोष मानता आया हूं। यह सच है कि यह दोष हमारे यहां परंपरा से चला आ रहा है। अस्पृश्यता बुद्धि के तथा करुणा, दया व प्रेम की भावना के विरुद्ध है। चूंकि मैं हिंदू धर्म को अपने प्राणों से भी अधिक प्यार करता हूं, इसलिए धर्म पर अस्पृश्यता एवं अन्य कलंको सहना मेरे लिए असंभव हो गया है। भले ही कोई मेरे टुकड़े टुकड़े कर दे, लेकिन मैं दलित वर्गों का साथ नहीं छोड़ सकता। गांधी जी का मानना था कि वर्ण व्यवस्था जन्म पर आधारित नहीं, बल्कि गुण और कर्म पर आधारित श्रम विभाजन है। इसलिए उन्होंने वर्ण को बनाए रखते हुए अस्पृश्यता को खत्म करने की बात कही। उनके साधन नैतिक थे जैसे- प्रायश्चित और उपवास, मंदिर प्रवेश आंदोलन, हरिजन सेवक संघ के माध्यम से सफाईकर्मियों के साथ रहना, सहभोज। गांधी मानते थे कि जब सवर्ण हिंदू अपने पाप को समझेगा और दलित को गले लगाएगा, तभी सच्ची समरसता आएगी। उन्होंने हरिजन शब्द दिया, जिसका अर्थ था ईश्वर के लोग। गांधी जी कहा करते थे कि मेरे लिए तो

मुक्ति का मार्ग, अपने देश और मनुष्य जाति की सेवा के निमित्त सतत् परिश्रम करने में है। गांधी जी कहते थे कि आत्मरक्षा का सबसे अच्छा और चिरस्थायी साधन आत्मशुद्धि है। आत्मशुद्धि के लिए हमें सर्वप्रथम अस्पृश्यता संबंधी अपने पाप का प्रायश्चित्त करना होगा।

इस मॉडल की सबसे बड़ी ताकत यह थी कि यह हिंसा को रोकता था और सामाजिक संवाद पर जोर देता था। लेकिन इसकी सबसे बड़ी कमजोरी यह थी कि यह उत्पीड़क की नैतिकता पर निर्भर था। अम्बेडकर ने इसकी आलोचना करते हुए कहा था कि जो समाज हजारों साल से शोषण कर रहा है, उसका हृदय अचानक कैसे बदल जाएगा। अम्बेडकर के लिए जाति केवल भेदभाव नहीं, बल्कि सत्ता और संसाधनों के बंटवारे की व्यवस्था थी। इसलिए उन्होंने कहा कि “भाईचारे के लिए जाति का विनाश एक ज़रूरी शर्त है।”

जहां डॉ भीम राव अम्बेडकर हिन्दू धर्म को सामाजिक बुराइयों के लिए जिम्मेवार बताते हैं वहीं महात्मा गांधी हिन्दू धर्म को मौलिक रूप से अच्छा मानते हैं। उनका यह भी मानना है कि सभी धर्मों में अच्छाइयां हैं उसी प्रकार सभी धर्मों में कुछ रूढ़ियों की वज़ह से बुराइयां भी आ गई हैं सच्चे धर्मा अनुयायी का कर्तव्य है कि वह अपने धर्म में जो खामियां आ गई हैं उनको नैतिकता एवं विवेक की कसौटी पर कसकर दूर करने का प्रयास करें। डॉ अम्बेडकर ने जात-पात तोड़ने के लिए एक लेख लिखा जिसके संदर्भ में महात्मा गांधी ने अपना विचार व्यक्त किया कि यह लेख ऐसा है जिसकी उपेक्षा कोई भी सुधारक नहीं कर सकता। रूढ़िग्रस्त लोग भी इसे पढ़कर लाभ ही उठाएंगे। लेकिन इससे यह नहीं समझना चाहिए कि लेख में एतराज करने लायक कोई बात नहीं है। इसे तो पढ़ना ही इसलिए चाहिए कि इसमें गहरे एतराज की गुंजाइश है। डॉक्टर अम्बेडकर तो हिन्दू धर्म के लिए एक चुनौती हैं। उनका पालन पोषण एक हिन्दू की तरह हुआ और एक हिन्दू नरेश द्वारा शिक्षित किए जाने पर भी, स्वर्ण कहे जाने वाले हिन्दुओं द्वारा अपने और अपनी जाति वालों के साथ होने वाले व्यवहार से हुए इतने निराश हो गए हैं कि न केवल स्वर्ण हिन्दुओं को, बल्कि उस धर्म को भी छोड़ने का विचार कर रहे हैं जो उनकी तथा उन तमाम हिन्दुओं की संयुक्त विरासत है। उस धर्म को मानने का दावा करने वाले एक वर्ग के व्यवहार के कारण वह हिन्दू धर्म से ही निराश हो गए हैं। डॉक्टर अम्बेडकर ने पाया कि १२ स्वर्ण हिन्दुओं के विशाल बहुमत ने अपने उन सहधर्मियों के साथ, जिन्हें कि उन्होंने अस्पृश्य शुमार किया है, न केवल निर्दयता या अमानुषिकता का व्यवहार किया है, बल्कि अपने व्यवहार का आधार भी अपने शास्त्रों के आदेश को बनाया है। और जब डॉक्टर अम्बेडकर ने शास्त्रों को देखना शुरू किया तो उन्हें मालूम हुआ कि सचमुच उनमें अस्पृश्यता और उसके लगाए जाने वाले तमाम अर्थों की काफी गुंजाइश है। डॉक्टर अम्बेडकर ने यह तीन आरोप लगाए हैं : हरिजनों के साथ निर्दयतापूर्वक व्यवहार किया जाता है, निर्दयतापूर्वक व्यवहार करने वाले अपने इस व्यवहार को निर्लज्जता पूर्वक उचित ठहराते हैं; और हिन्दुओं के शास्त्रों में इस प्रकार के निर्दय व्यवहार का समर्थन किया गया है। और अपने इन आरोपों के समर्थन में उन्होंने शास्त्रों के अध्याय और श्लोक उद्धृत किए हैं। महात्मा गांधी उपर्युक्त डॉ अम्बेडकर के विचारों के संदर्भ में कहा कि मेरी राय में डॉक्टर अम्बेडकर ने सबसे बड़ी जो गलती की वह यह है कि उन्होंने ऐसे उद्धरण

चुने हैं जिनकी प्रामाणिकता और महत्ता संदिग्ध हैं और ऐसे पतनोमुखी हिंदुओं का उदाहरण दिया है जो हिंदू धर्म का अत्यंत गलत रूप में प्रतिनिधित्व करते हैं। डॉक्टर अंबेडकर ने जो मानदण्ड रखा है उसके हिसाब से तो संभवतः आजकल का कोई भी जीवित धर्म खरा नहीं उतरेगा। जिस धर्म में चैतन्य, ज्ञानदेव, तुकाराम, तिरुवल्लुवर, रामकृष्ण परमहंस, राजा राममोहन राय, महर्षि देवेंद्रनाथ ठाकुर, विवेकानंद तथा अन्य बहुत से लोग हुए जिनके नाम सहज ही गिनाये जा सकते हैं, क्या वह धर्म गुणों से इतना हो सकता है, जितना कि डॉक्टर अंबेडकर ने अपने लेख में सिद्ध करने की कोशिश की है? किसी धर्म का निर्णय उसके सबसे बुरे नमूनों से नहीं, बल्कि उसके सर्वोत्तम नमूनों से ही किया जा सकता है, क्योंकि उस धर्म के सर्वोत्तम नमूनों को ही ऐसा आदर्श माना जा सकता है जिससे आगे न जा सकें तो भी उसे तक पहुंचाने की आकांक्षा तो करनी ही चाहिए।

डॉ अंबेडकर का मॉडल तीन स्तरों पर काम करता है: पहला, सामाजिक स्तर पर - शिक्षा, आत्म-सम्मान और धर्मांतरण के माध्यम से हीनता से मुक्ति। दूसरा, राजनीतिक स्तर पर - पूना पैक्ट के माध्यम से आरक्षित सीटों के द्वारा सत्ता में भागीदारी। तीसरा, कानूनी स्तर पर - संविधान के अनुच्छेद 15, 17 और 46 और बाद में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति अधिनियम के द्वारा सुरक्षा।

अंबेडकर का जोर इस बात पर था कि समरसता दया से नहीं, बल्कि बराबरी से आएगी। जब तक दलित व्यक्ति के पास जमीन, शिक्षा और राजनीतिक शक्ति नहीं होगी, तब तक कोई भी सहभोज उसे बराबर नहीं बना सकता। यह मॉडल पीड़ित को अधिकार देता है।

दोनों मॉडलों में बुनियादी अंतर निदान का है। गांधी के लिए बीमारी नैतिक थी, अंबेडकर के लिए संरचनात्मक। कई अलग अलग सर्वेक्षणों में यह बात स्पष्ट हुई है कि आरक्षण और कानून ने उनके बच्चों को स्कूल और नौकरी में तो जगह जरूर दी है, जो गांधी के मॉडल से संभव नहीं था। लेकिन फिर भी आज तक गांधी के मॉडल का अनुसरण कर के उच्च जाति के लोगों ने आरक्षण से प्राप्त नौकरियों वाले व्यक्तियों को वह सम्मान नहीं दिया जिसके वह पात्र हैं। अभी भी लोगों का यह माना है कि कानून होने के बाद भी गांव में मंदिर में अलग पंक्ति, बारात में रोक और शादी-विवाह में जाति देखना अभी भी होता है। एक उत्तरदाता ने कहा, नौकरी तो मिल गई, पर लड़की की शादी में अभी भी जाति पूछते हैं। यह दिखाता है कि कानून ने संरचना बदली, पर मन नहीं बदला। यहां गांधी के सामाजिक संवाद, नैतिकता, आत्मशुद्धि की जरूरत महसूस होती है।

निष्कर्ष यह है कि सामाजिक समरसता के लिए एक समन्वित मॉडल की आवश्यकता है जिसे हम संवैधानिक नैतिकता के साथ सामाजिक नैतिकता कह सकते हैं। सुझाव ये हैं कि स्कूलों में NEP 2020 के तहत गांधी के सर्वोदय और अंबेडकर के सामाजिक न्याय दोनों को एक साथ पढ़ाया जाए तथा आरक्षण के साथ-साथ अंतर-जातीय सहभोज और युवा संवाद कार्यक्रमों को सरकारी योजना का हिस्सा बनाया जाए, साथ ही यह कार्यक्रम सिर्फ सरकारी योजना

तक सीमित न रहें बल्कि जमीनी धरातल पर इनका प्रभाव भी परिलक्षित हो। संपूर्ण भारत में समरसता का मूल्यांकन केवल सरकारी कार्यक्रमों की संख्या से नहीं, बल्कि सामाजिक स्वीकृति के संकेतकों से किया जाए।

इस प्रकार यह शोध पत्र, इस बात पर जोर देता है कि समरसता का अर्थ केवल साथ रहना नहीं, बल्कि बराबर के रूप में साथ रहना और दिखना भी है, और यह बराबरी कानून और करुणा दोनों से ही आएगी। इसलिए दोनों मॉडल एक-दूसरे के पूरक हैं। अम्बेडकर के बिना समरसता कमजोर है और गांधी के बिना अधूरी है।

भारतीय समाज में सामाजिक समरसता की स्थापना के लिए किसी एक एकांगी मॉडल का अनुसरण करना पर्याप्त नहीं है, बल्कि इसके लिए महात्मा गांधी के नैतिक-आध्यात्मिक दृष्टिकोण और डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के संरचनात्मक-संवैधानिक दृष्टिकोण के समन्वय की अनिवार्य आवश्यकता है।

वर्तमान अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि जहाँ अम्बेडकर का सामाजिक न्याय मॉडल कानूनी अधिकारों, संवैधानिक सुरक्षा (जैसे- अनुच्छेद 15 और 17) और राजनीतिक प्रतिनिधित्व के माध्यम से हाशिए के वर्ग को सत्ता में हिस्सेदारी और आत्म-सम्मान प्रदान करता है, वहीं गांधी का हृदय-परिवर्तन मॉडल आत्म-शुद्धि, सामाजिक संवाद और अंतःकरण की नैतिकता के जरिए बहुसंख्यक समाज की मानसिकता में बदलाव लाने का प्रयास करता है। समकालीन भारत के अनुभव यह दर्शाते हैं कि केवल कानूनों और आरक्षण के माध्यम से भौतिक व संरचनात्मक दूरियां तो कम हुई हैं, किंतु सामाजिक स्वीकृति और मानसिक स्वीकार्यता के स्तर पर पूर्वाग्रह अभी भी बने हुए हैं। इसके विपरीत, केवल नैतिक उपदेशों या पारंपरिक सहभोजों से वंचित वर्गों को वास्तविक अधिकार और समानता नहीं मिल सकती।

अतः, एक स्थायी और समावेशी समरसता के लिए "संवैधानिक नैतिकता" और "सामाजिक नैतिकता" के संगम पर आधारित एक समन्वित मॉडल ही एकमात्र समाधान है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP 2020) के अंतर्गत इन दोनों विचारकों के दर्शन को युवा पीढ़ी के पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाकर वैचारिक आधार तैयार किया जाना चाहिए। साथ ही, शासकीय योजनाओं और जमीनी स्तर के युवा संवाद कार्यक्रमों के माध्यम से यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि समरसता केवल सरकारी आंकड़ों तक सीमित न रहे, बल्कि वह सामाजिक व्यवहार का अंग बने। संक्षेप में कहें तो, डॉ. अम्बेडकर के बिना सामाजिक समरसता कानूनी रूप से कमजोर है और महात्मा गांधी के बिना वह मानवीय संवेदनाओं के स्तर पर अधूरी है।

संदर्भ सूची

1. Ambedkar, B. R. (1936). Annihilation of Caste.
2. Gandhi, M. K. (1927). An Autobiography.
3. Jaffrelot, C. (2005). Dr Ambedkar and Untouchability.



4. Mehta, V. R. (1992). Foundations of Indian Political Thought.
5. Zelliott, E. (2013). Ambedkar's World.
6. Gandhi, M. K. (1921). Young India a weekly journal or paper published in English by Mahatma Gandhi from 1919 to 1931.